''बेटी बचाओ, बेटी पढ़ाओ''

JAYOTI VIDYAPEETH WOMEN'S UNIVERSITY, JAIPUR

(Format for Preparing E Notes)

Faculty of FEM

Faculty Name- **JV'n GIRIJA SHARMA (Assistant Professor)**

Program- III Semester B.A B.ED

Course Name - HINDI LANGUAGE

Session No. & Name – 1.8 Arguments for **हिन्दी गद्य की विधाएँ**

Academic Day starts with –

Greeting with saying **'Namaste'** by joining Hands together following by 2-3 Minutes Happy session, Celebrating birthday of any student of respective class and **National Anthem**.

Lecture Starts with-

Review of previous Session Arguments for -Against HINDI LANGUAGE

Topic to be discussed today- Today We will discuss about Arguments for **हिन्दी गद्य की विधाएँ**

Introduction & Brief Discussion About The Topic

1. भारतेन्दु युगीन नाटक 1850 से 1900 ई.

हिन्दी नाटकों का आरंभ भारतेंदु हरिश्चन्द्र से ही होता है। भारतेंदु हिन्दी साहित्य मे आधुनिकता के प्रवर्तक साहित्यकार है। भारतेंदु और उनके समकालीन लेखकों मे देश की राजनीतिक, सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक दुर्दशा के प्रति गहरी पीड़ा थी और इस पीड़ा के मूल मे था देश प्रेम। इसलिए इनके साहित्य मे समाज को जागृत करने का संकल्प है और नई विषय वस्तु के रूप मे देश प्रेम का भाव मुखर है। समाज को जागृत

करने मे नाटक की प्रमुख भूमिका है। निराशा से आशा की ओर ले जाने का कार्य भारतेंदु जी ने नाटकों के माध्यम से किया। भारतेंदु जी ने काफी संख्या मे मौलिक नाटक लिखे और बंगला तथा संस्कृत नाटकों का अनुवाद भी किया।

2. द्विवेदी युगीन नाटक 1901 से 1920

पं. महावीर प्रसाद द्विवेदी का खड़ी बोली गद्य के विकास मे अमूल्य योगदान है। इस काल मे विभिन्न भाषाओं के नाटकों का अनुवाद बड़े पैमाने पर हुआ। बंगला, अंग्रेजी, संस्कृत नाटकों के हिन्दी अनुवाद का प्रकाशन हुआ। मौलिक नाटककारों मे किशोरीलाल गोस्वामी, अयोध्या सिंह उपाध्याय 'हरिऔध' शिवनंदन सहाय,रायदेवी प्रसाद पूर्ण के नाम उल्लेखनीय है।

3. प्रसाद युगीन नाटक 1921 से 1936

नाट्य रचना मे व्याप्त गतिरोध को समाप्त करने वाले व्यक्तित्व के रूप मे जयशंकर प्रसाद जी का आगमन हुआ। प्रसाद जी के नाटकों मे संस्कृतिक चेतना का विकासमान रूप देखने को मिलता है। इसमे इतिहास और कल्पना के संगम से वर्तमान को नई दिशा देने का प्रयास ही महत्वपूर्ण है। वास्तव मे इस काल मे ऐतिहासिक नाटकों की धूम रही। जयशंकर प्रसाद जी के अतिरिक्त हरिकृष्ण प्रेमी, गोविन्द, वल्लभ पंत, सेठ गोविन्ददास आदि ने ऐतिहासिक नाटक लिखे।

4. प्रसादोत्तर युगीन नाटक 1937 से अभी तक

प्रसादोत्तर युगीन नाटकों मे यथार्थ का स्वर प्रमुख है। स्वाधीनता प्राप्ति का लक्ष्य पुनरूत्थान एवं पुनर्जागरण के रूप मे नाटकों मे व्यक्त हुआ। आदर्शवादी प्रवृत्तियों प्रसादोत्तर काल का संगम इस काल को नयी दिशा की ओर उन्मुख करता है। प्रसाद युगीन नाटकों मे रोमांटिक भावबोध, सांस्कृतिक चेतना, समसामयिक जीवननर्शी के मध्य एक खामी के रूप मे था। प्रसादोत्तर युगीन नाटकों मे उपन्द्रेनाथ ष्अश्कष पहले नाटकार थे जिन्होंने हिन्दी नाटकों को रोमांटिक भावबोध से बाहर निकाकर आधुनिक भावबोध से जोड़ा।

नाटक के तत्व

- पश्चात्य विद्वानों के मतानुसार नाटक के प्रमुख तत्व इस प्रकार हैं–

1. कथावस्तु 2. पात्र चरित्र–चित्रण 3. संवाद या कथोपकथन 4. भाषा–शैली 5. देशकाल और वातावरण 6. उद्देश्य 7. संकलनत्रय 8. रंगमंचीयता

- भारतीय विद्वानों के अनुसार नाटक के तत्व इस प्रकार है–

1. कथावस्तु 2. नेता (नायक) 3. अभिनय 4. रस 5. वृत्ति

कथावस्तुक –कथावस्तु का अर्थ है नाटक में पुस्तुवत घटना चक्र अर्थात जो घटनाएं नाटक मे घटित हो रही हैं। यह घटना चक्र विस्तृ त होता हैं और इसकी सीमा में नाटक की स्थू5ल घटनाओ के साथ पात्रो के आचार विचारों का भी समावेश हैं।

पात्र और चरित्र चित्रण– वैसे तो और नाटक में पात्रों की संख्या– बहुत अधिक होती हैं, किंतु सामान्यनतरू एक–दो पात्र ऐसे मुख्य होते हैं। किसी विषय नाटक एक प्रधान पुरूष पात्र होता हैं जिसे हम 'नायक' कहते हैं और इसके अलावा प्रधान या मुख्यो स्त्री पात्र को हम 'नायिका' कहते हैं। किसी भी चरित्र प्रधान नाटक में नाटक की कथावस्तु एक ही पात्र के चारों ओर घूमती रहती हैं।

देशकाल तथा वातावरण चित्रण एवं संकलनत्रय –परिवेश का अर्थ होता हैं देश काल। किसी भी नाटक मे उल्लेलखित घटनाओं का संबंध किसी ना किसी स्था न एवं काल से होता है। नाटक में यथार्थता, सजीवता एवं स्वोभाविकता लाने के लिए यह आवश्यिक है कि नाटककार घटनाओं का यथार्थ रूप से चित्रण करें।

कथोपकथन या संवाद– नाटक के भिंन्न–भिन्न पात्र आपस में एक दूसरे से जो वार्तालाप करते हैं, उसे संवाद कहते हैं। इन संवादों के द्धारा नाटक की कथा आगे बढ़ती है, नाटक के चरित्र पर प्रकाश पड़ता है। नाटक में स्वेगत कथन भी होते हैं। स्वलगत कथन में पात्र स्वायं से ही बात करता हैं। इनके द्धारा नाटककार पत्रों की मानसिक स्थिति का चित्रण करता हैं।

शैली– रंगमंच की दृष्टि से नाटक की कई शैलियां है जैसे भारतीय शास्त्री य नाटय शैली, पाश्चांत नाटय शैली। इसके अतिरिक्तं विभिन्न् लोकनाट्य शैलियां भी हैं जैसे– रामलीला, रासलीला, महाभारत आदि।

अभिनेयता एवं रंगमंच– अधिकतर नाटककार नाटक की रचना रंगमंच पर खेले जाने के लिए ही करते हैं। रंगमंच पर खेलने के बाद ही एक नाटक पूर्ण होता हैं। रंगमंच पर नाटक की प्रस्तुाति जिस व्यतक्ति के निर्देशन मे संपन्नत होती हैं, उसे निर्देश आके कहते हें। निर्देशक रंगमंच के उपकरणों एवं अभिनेताओं के द्धारा उस नाटक को प्रेक्षकों के सामने प्रस्तुत करता हैं।

उद्देश्य –कोई भी नाटककार अपने नाटक के द्धारा गंभीर उद्देश्यर को हमारे सामने प्रस्तुात करता है। अनेक नाटककारों ने स्वनयं अपने नाटकों के उद्देश्यद की चर्चा की है। उदाहरण के लिए प्रसाद जी ने 'चंद्रगुप्तव', 'विशाख' आदि ऐतिहासिक नाटकों के लिखने के उद्देश्यय पर प्रकाश डाला है।